'RESEARCH JOURNEY' International Multidisciplinary E- Research Journal
Impact Factor - (SJIF) - 6.261, (CIF) - 3.452(2015), (GIF)-0.676 (2013)
Special Issue 64 : हिंदी की गरिमा एवं अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज
UGC Approved Journal
ISSN : 2348-7143
October-2018

हिंदी ने 'कर ली दुनिया मुट्ठी में'

प्रा. सूर्यकांत रामचंद्र चव्हाण
हिंदी विभाग
राजर्षि शाहू महाविद्यालय (स्वायत्त), लातूर
ई–मेल % srchavan1983@gmail.com
दूरभाषा : ०९९२१७०८१७२

''बहुत – से लोग कहते हैं–
अब कहने के लिए कुछ भी बाकी नहीं
तय करने के लिए कुछ भी बचा नहीं
जैसे शब्द नपुंसक हो गए हों
जैसे कदम बाँझहो गए हों
तो मैं कहता हूँ–
सफर की, इतिहास की बात न करो
मुझे अगला कदम रखने के लिए जमीन दो।''[१]

'मुझे अगला कदम रखने के लिए जमीन दो' कवि पाश की ये पंक्ति हिंदी के उस बढ़ते कदम की ओर इशारा करती है जो अपने गोद में पूरे विश्व को समेटकर अपनी मीठी वाणी से वह दुलारना चाहती है और अपनी संस्कृति की 'वसुधैव कुटुम्बकम' की परिकल्पना को पूरा करना चाहती है। हाँ! हिंदी अब केवल भारत तक सीमित नहीं रही वह आज पूरे विश्व में फैल गई है। आज अंतरराष्ट्रीय क्षितीज पर उसका ही बोलबाला है। आज से लगभग अड़सठ वर्ष पूर्व संविधान सभा के सभापति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने हिंदी को राजभाषा बनाते समय कहा था– ''हमने जो किया है उससे ज्यादा अक्लमंदी का फैसला हो ही नहीं सकता था। मुझे बहुत अच्छा लग रहा है। मुझे खुशी है और उम्मीद करता हूँ कि आनेवाला वक्त इसके लिए हमारी पीठ थपथपाएगा।''[२] उस समय मिला यह हिंदी का संवैधानिक सम्मान था। आज हमें इस सफ़र के विरासत में रहे प्रत्येक पूर्वजों पर नाज़ होना चाहिए क्योंकि उन्होंने हिंदी के अगले कदम को भाँपा था। शायद इसीलिए हिंदी राजभाषा से विश्वभाषा के चरम पर पहुँच गई है।

आज हिंदी विश्व की सबसे लोकप्रिय भाषा बन गई है। पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी की मिठास से सभी को मंत्रमुग्ध कर देने से लेकर आज के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा पूरे विश्व में हिंदी में ही व्याख्यान देना यह हिंदी के विश्वभाषा के बढ़ते कदम के लिए 'अच्छे दिन' का ही परिचायक है।

आज भूमंड़लीकरण के बाज़ार का भारत भी विश्व व्यवस्था का अंग बन गया है। वैश्विकरण की इस प्रक्रिया ने न केवल व्यापार के द्वार खोले बल्कि उसके साथ–साथ साहित्य, संस्कृति, सीमा और भाषाओं का भी आदान–प्रदान होता रहा। सीमाओं का यह प्रभंजन हिंदी के लिए दहलीज़के बाहर रखा वह कदम था जिसने अब तक सभी को अपनी मीठी वाणी से आकर्षित किया है। अजय तिवारी इसके संदर्भ में लिखते हैं– ''भाषा बाज़ार और तकनीक से संबंध है, भूमंड़लीकरण बाज़ार और तकनीक का परिणाम है, स्वभावत: भूमंड़लीकरण की प्रक्रिया से भाषा का विकास संबद्ध है। बाज़ार–व्यवस्था राष्ट्रीय सीमाएँ तोड़ती हैं– पूँजी ने वास्तविक रूप में सीमाओं का प्रभंजन कर दिया है। भाषा अंतत: राष्ट्रीय और सांस्कृतिक प्रश्न है। इसलिए

भूमंड़लीकरण के साथ भाषा की नई संभावनाएँ भी प्रकट हुई हैं और नई टकराहटें भी।''[३]यहाँ हमें नई संभावनाओं से अधिक उम्मीद करते हुए हिंदी के प्रसार के लिए अगले कदम रखने चाहिए। क्योंकि 'टकराहटें' तो होती ही रहेगी। आस–पड़ोस को छोड़कर हम अकेले तो विकास की नैया नहीं चला सकते। विश्व व्यवस्था में रहना है तो व्यवस्था के साथ ही हमें चलना चाहिए। वैश्विकरण में भाषिक टकराहट से भले ही भाषा भेद मिट रहे हों लेकिन इसमें भी हमें अपना वजूद बनाय रखना पड़ेगा। क्योंकि संघर्ष के गर्भ में ही विकास पलता है। हमें ये न भूलना चाहिए कि कभी किसी समय हमारी वाणी संस्कृत थी। अगर उसी को पकड़कर बैठे रहते तो आज हिंदी का जन्म भी नहीं हो पाता। अगर एक गाँव की भाषा अंग्रेजी अंग्रेजों द्वारा (व्यापार नीति के माध्यम से साम्राज्यवाद) पूरे विश्व में फैल सकती है तो हमें भी हमारी नीतियाँ और मानसिकता को खँगोलने की आवश्यकता है। सुधा अरोड़ा के शब्दों में कहे तो– ''भारत में अपनी भाषा की दुर्दशा के लिए सबसे पहले तो हमारा भाषाई दृष्टिकोन जिम्मेदार है, जिसके तहत हमने अंग्रेजी को एक संपन्न वर्ग की भाषा बना रखा है।''[४]

हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि आज का समय बाज़ारवाद का है। बाज़ारवाद में बाज़ार मात्र उपभोक्ताओं की तलाश में लगा रहता है। आज दुनिया जानती है कि वह बाज़ार भारत है। भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्थावाली वह आबादी है जहाँ युवाओं की तादाद सबसे अधिक है। इसलिए प्रत्येक देश हमसे रिश्ता जोड़ना चाहता है। कहा जाता है कि इसी बाज़ार से ही हिंदी (दक्खिनी हिंदी) का ही जन्म हुआ था। तो फिर हम ये क्यों कह रहे हैं कि अंग्रेजी ही अनिवार्य है, रोजगार का पर्याय है। शशिकला राय के शब्दों में कहे तो– ''घर के दरवाजे के साथ–साथ खिड़की की अनिवार्यता से कब इनकार है। .....इसीलिए हिंदी की कद्र और अंग्रेजी के क़द पर पूनर्विचार जरुरी है।''[५]

देश को स्वतंत्रता मिलने के बाद बीबीसी के संवाददाता द्वारा पूछे गए प्रश्न पर गाँधीजीने हिंदी की कद्र और अंग्रेजी के क़द को पहचान लिया था। तभी उन्होंने पूरी दुनिया को कह दिया था कि– ''दुनिया से कह दो गाँधी अंग्रेजी नहीं जानता।''[६] आज हमें पुन: ऐसे नये गाँधी की आवश्यकता है। कभी आचार्य विनोबा भावे ने भी कहा था– ''हिंदी को गंगा नहीं, बल्कि समुद्र बनाना होगा।''[७] लो आज वह पूरे विश्व में अपनी लहरें लहरा रही हैं। आज हमें इस बात पर भी गर्व होना चाहिए कि हिंदी वैश्विक स्तर पर ध्वनि और लिपि के दृष्टि से सबसे विज्ञान संपन्न भाषा है। हिंदी में एक अक्षर के लिए एक ही ध्वनि मिलती है जबकि यह विशेषता अन्य वैश्विक भाषाओं में नहीं मिलती। वैज्ञानिकता की दृष्टि से हिंदी संपन्न एवं समर्थ है।

सन् १९७५ में नागपुर में जो विश्व हिंदी सम्मेलन हुआ वह हिंदी को वैश्विक मंच प्रदान करनेवाला पहला कदम था। आज लगातार विभिन्न देशों में ऐसे विश्व संम्मेलन होते रहे हैं। जिनके माध्यम से प्रवासी भारतीयों को अपनी वाणी में अभिव्यक्त होने के लिए एक नया मंच मिला। इस प्रकार से हिंदी ने समूचे विश्व को जोड़ने का महत् कार्य किया। आज संसार के कई देशों में १० जनवरी यह दिन 'विश्व हिंदी दिवस' के रूप में मनाया जाता है। जिसकी फलश्रुति यह है कि हिंदी आज दुनिया में सबसे अधिक बोलनेवाले की संख्या की दृष्टि से दुनिया की दूसरे नंबर की भाषा है। प्रो. जी. गोपीनाथन लिखते हैं– ''नवीनतम आँकड़ों और एनकार्टा एनसायक्लोपीड़िया जैसे अधिकारिक प्रकाशनों से यह साबित हुआ है कि बोलनेवालों की संख्या की दृष्टि से चीनी (मंदारिन – ८३ करोड़ ७० लाख) के बाद सर्वाधिक बोली जानेवाली भाषा हिंदी है (३३ करोड़ ३० लाख)।''[८] जबकि जयंती प्रसाद नौटियाल अपने शोध रिपोर्ट के सार में लिखते हैं– ''संपूर्ण विश्व में यह प्रचारित किया जाता है कि मंदारिन सबसे अधिक बोली जानेवाली भाषा है जबकि सत्य यह है कि

संपूर्ण विश्व में मंदारिन जाननेवाले २०१५ के आंकड़ों के अनुसार सिर्फ ११०० मिलियन हैं।..... हिंदी की लोकप्रियता..... २०१५ में प्रचुर बढ़ोत्तरी से यह १३०० मिलियन हो गई है। अर्थात् मंदारिन से २०० मिलियन ज्यादा। अंग्रेजी को तो सभी स्त्रोतों से..... यह आंकड़ा अधिकतम १००० मिलियन तक बड़ी मुश्किल से पहुँचता हैं।''[९]

आज लगभग विश्व के ७० देशों के सैंकड़ों विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जाती है। आज बांग्लादेश, नेपाल, जापान, अमरिका, गयाना, टोबेगो, म्यांमार, बहरीन, भूटान, कुवैत, ओमान, श्रीलंका, ब्रिटेन, कनाड़ा, रूस, हांगकांग, थाईलैण्ड, सिंगापुर, उगांडा, पोलंड, स्वित्झर्लैंड, हंगरी आदि देशों में हिंदी को जीवित रखने का कार्य प्रवासी भारतीयों ने किया है।मारिशस, सूरीनाम, त्रिनिड़ाड, फिजी जैसे देशों में तो हिंदी वहाँ की राजभाषाओं में स्थान प्राप्त कर चुकी हैं। विश्व के लगभग पचास देशों में हिंदी बोली और समझी जाती है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हिंदी मीड़िया बाज़ार की भाषा बन गई है। 'ग्लोबल एप्रोच' की वजह से बाज़ार भी अपने विज्ञापनों के जरिए हिंदी को स्वीकार रहा है। हाँ! इतना सच है कि वह हिंदी प्रेमचंद और रेणु की हिंदी नहीं रही। उसका आँचालिक पुट छुटता नजर आ रहा है। इसलिए आज हमें तकनीक, मीड़िया के नये अंदाजों को समझना होगा और वैसे ही हिंदी को समृद्ध बनाना पड़ेगा। आज केवल अंग्रेजी से ही नहीं बल्कि हिंदी से भी हमारा उद्धार हो सकता है। उससे अब पेट से जोड़ने की कोशिशें हो रही हैं। हमें भी लगातार भगीरथ प्रयास बनाय रखना चाहिए कि इस भूमंड़लीकरण के दौर में भी हम अपनी भाषा को समृद्ध बनाये और उसके प्रति अपनी अस्मिता बनाय रखें। इसलिए शिक्षा व्यवस्था में बुनियादी बदलाव करके उसे वैज्ञानिक साहित्य से जोड़ना पड़ेगा। हिंदी की बदलती दुनिया को स्वीकार कर 'भाषा बहता नीर है' इस भाषा के अभिलक्षण को भी स्वीकार करना पड़ेगा। इसीलिए आज हिंदी भी पूरी दुनिया में अपना परचम फहरा रही है। उसने पूरी दुनिया को मुट्ठी में कर लिया है। इस पर हमें विश्वास रख उम्मीदों को जिंदा रखना चाहिए। वीरेन डंगवाल के शब्दों में कहें तो–

''मैं नहीं तसल्ली झूठ–मूठ की देता हूँ
हर सपने के पीछे सच्चाई होती है
हर दौर कभी तो ख़त्म हुआ ही करता है
हर कठिनाई कुछ राह दिखा ही देती है।
ग ग ग ग
आयेंगे, उजले दिन ज़रूर आयेंगे।''[१०]

संदर्भ ग्रंथ :

१. बीच का रास्ता नहीं होता – पाश, संपा. अनुवाद चमनलाल, राजकमल प्र. नई दिल्ली, चौथी आवृत्ति २०१०, पृ. ४४.
२. हिंदी में हम – अभयकुमार दुबे, वाणी प्र. नयी दिल्ली, प्रथम सं. २०१५, पृ. ०१
३. नया ज्ञानोदय – संपा. रवींद्र कालिया, फरवरी २०११, पृ. १०
४. अन्यथा – संपा. कृश्ण किषोर, जुलाई, २००६, पृ. १५८
५. वही, पृ. १८९
६. नया ज्ञानोदय – संपा. लीलाधर मंडलोई, सितंबर २०१५, पृ. ३४

७. राष्ट्रभाषा – प्रा. अनंतराम त्रिपाठी, नवंबर २०१२, पृ. १७
८. विश्वभाषा हिंदी की अस्मिता : स्वप्न और यथार्थ – प्रो.जी. गोपीनाथन्, म.गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय प्र.वर्धा, पहला सं. २००८, पृ. ३४
९. सामायिक सरस्वती – महेश भारद्वाज, जुलाई – सितंबर २०१५, पृ. ४९
१०.दुश्चक्र में स्रष्टा – वीरेन डंगवाल, राजकमल प्र. नई दिल्ली, दूसरी आवृत्ति, २०१५, पृ. २७

रजत महोत्सवी वर्ष

NAVGAN ARTS & COMMERCE COLLEGE
NSSR
PARLI VAIJNATH

स्वर्ण महोत्सवी वर्ष

जवाहर शिक्षण संस्था का वैधनाथ कॉलेज, परळी वैजनाथ (महाराष्ट्र) तथा
नवगण शिक्षण संस्था राजुरी (न) का कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, परळी वैजनाथ (महाराष्ट्र)
के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित

एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी

१ फरवरी, २०१९

इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य : संवेदना के स्वर

प्रमाणित किया जाता है कि, श्री/श्रीमती/डॉ. सूर्यकांत रामचंद्र चव्हाण

महाविद्यालय राजर्षी शाहू महाविद्यालय (स्वायत्त) लातूर ने संगोष्ठी में प्रतिभाग लिया ।

आपने इस संगोष्ठी में सत्र अध्यक्ष/विषय विशेषज्ञ/बीजभाषक/प्रपत्र वाचक की भूमिका निभायी ।

प्रपत्र का शीर्षक इक्कीसवी सदी की पड़ताल करती हिंदी लघुकथा।

डॉ.आर.एस.बांगड प्राचार्य नवगण महाविद्यालय, परळी वै.	डॉ.अर्चना परदेशी हिंदी विभाग प्रमुख नवगण महाविद्यालय, परळी वै.	डॉ.प्रकाश कोपार्डे हिंदी विभाग प्रमुख वैद्यनाथ कॉलेज, परळी वै.	डॉ.आर.के.इप्पर प्राचार्य वैद्यनाथ कॉलेज, परळी वै.

सह संयोजक : प्रा.अमर आलदे, डॉ.वीरश्री आर्य, प्रा.अविनाश जाधव, डॉ.दयानंद कुरुडे, प्रा.हरीश मुंडे